प्रकाशन तिथि : 26 मार्च 2017, मूल्य 2 रुपये, वर्ष 35, अंक 9, कुल पृष्ठ 36

ISSN 2454-5163

वीतराग-विज्ञान

(पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का मुखपत्र)

सम्पादक :
डॉ. हुकमचंद भारिल्ल

श्री दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र, गोम्मटगिरि, इन्दौर (म.प्र.)

वीतराग-विज्ञान (404)

हिन्दी, मराठी व कन्नड़ भाषा में प्रकाशित

जैनसमाज का सर्वाधिक बिक्रीवाला आध्यात्मिक मासिक

सम्पादक :

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

सह-सम्पादक :

डॉ. संजीवकुमार गोधा

प्रकाशक एवं मुद्रक :

ब्र. यशपाल जैन द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि., जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पर्क-सूत्र :

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015

फोन :(0141)2705581, 2707458

E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

ISSN 2454 - 5163

शुल्क :

आजीवन	:	251 रुपये
वार्षिक	:	25 रुपये
एक प्रति	:	2 रुपये

मुद्रण संख्या :

हिन्दी	:	7200
मराठी	:	2000
कन्नड़	:	1000
कुल	:	**10200**

सुख का साधन

हे नाथ ! इस आत्मा को सुखी करने के लिये किस साधन का अवलम्बन किया जाये ? मेरे सुख का साधन क्या है ? - इसप्रकार साधन की आकांक्षा रखने वाले शिष्य को श्री आचार्यदेव समझाते हैं कि हे भाई ! तू चिन्ता न कर, तेरा आत्मा ही स्वयं तेरे सुख का साधन है, उसका अवलम्बन करते ही तू सुखी हो जायेगा; इसलिये अपने आत्मा को ही सुख का साधन जानकर उसमें अन्तर्मुख हो। जब देखे तभी तेरे सुख का साधन तुझमें विद्यमान ही है, अन्तर्मुख होकर उसका अवलम्बन करे इतनी देर है। अन्तर्मुख होने पर तेरा आत्मा ही तेरे सुख का साधन बन जायेगा, दूसरा कोई साधन तुझे नहीं ढूंढना पड़ेगा।

अहो ! आचार्यदेव ने कितनी अद्भुत बात समझाई है। जो यह बात समझे उसके आत्मा में अपूर्व आनन्दोल्लास की उत्पत्ति हुए बिना नहीं रहेगी। अहो ! मुझमें ही मेरा सुख भरा था; किन्तु अभी तक मैं उसे बाहर ढूंढता रहा, इसलिये दु:खी हुआ। स्वभाव में ही मेरा सुख है ऐसा सम्यक्भान होने पर बाह्य में सुख बुद्धि छूट गई और अपने स्वभाव में मग्न होकर आत्मा स्वयं सुखरूप परिणमित हुआ उस सुख का साधन आत्मा ही है, अन्य कोई उसका साधन नहीं है।

– आत्मप्रसिद्धि, पृष्ठ 530

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का , घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 35 (वीर नि. संवत् - 2543) 404 अंक : 9

धिक ! धिक ! जीवन ...

धिक ! धिक ! जीवन समकित बिना।।
दान शील तप व्रत श्रुत पूजा, आतम हेत न एक गिना।
धिक ! धिक ! जीवन।। 1।।

ज्यों बिनु कन्त कामिनी शोभा, अंबुज बिनु सरवर सूना।
जैसे बिना एकड़े बिन्दी, त्यों समकित बिन सरब गुना।।
धिक ! धिक ! जीवन।। 2।।

जैसे भूप बिना सब सेना, नींव बिना मन्दिर चुनना।
जैसे चन्द बिहूनी रजनी, इन्हैं आदि जानो निपुना।।
धिक ! धिक ! जीवन।। 3।।

देव जिनेन्द्र साधु-गुरु करुना धर्म राग व्योहार भना।
निहचै देव धरम गुरु आतम, 'द्यानत' गहि मन वचन तना।।
धिक ! धिक ! जीवन।। 4।।

– कविवर पण्डित द्यानतरायजी

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर द्वारा संचालित एवं
श्री नेमिनाथ दिग.जैन नया मंदिर ट्रस्ट और अ.भा. जैन युवा फैडरेशन,
खनियांधाना द्वारा आयोजित

51वाँ वीतराग-विज्ञान आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर

दिनांक 21 मई 2017 से 7 जून 2017 तक

- आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के भवतापहारी सी.डी. प्रवचन का प्रसारण।
- डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल जयपुर, ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना आदि अनेक आत्मार्थी विद्वानों का प्रवचन, कक्षाओं के माध्यम से भरपूर लाभ।
- पाठशाला के अध्यापकों को बालबोध पाठमालायें एवं वीतराग-विज्ञान पाठमालाओं के अध्यापन हेतु विशेष प्रशिक्षण।
- देशभर के अलग-अलग प्रान्तों से पधार रहे साधर्मीजनों का मेला।
- श्री टोडरमल सिद्धान्त महाविद्यालय में प्रवेश लेने हेतु अपूर्व अवसर।
- बालकों हेतु डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया मुम्बई द्वारा विशेष कक्षायें।

आप सभी को शिविर में पधारने हेतु हार्दिक आमंत्रण है।

श्री टोडरमल दिग. जैन सिद्धांत महाविद्यालय हेतु छात्रों का चयन इसी प्रशिक्षण शिविर में होता है; अत: महाविद्यालय में प्रवेश हेतु अधिक से अधिक छात्रों को प्रेरणा देकर शिविर में भिजवायें।

संपर्क सूत्र -

(1) ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर 302015 (राज.) फोन-0141-2705581, 2707458;
Email - ptstjaipur@yahoo.com
(2) श्री नंदीश्वर दिगम्बर जैन मन्दिर, चेतनबाग, खनियांधाना, जिला-शिवपुरी 473990 (म.प्र.) मोबाइल -09575305898 (सोमिल शास्त्री), 09644122018 (आकाश शास्त्री)

सम्पादकीय

कुन्दकुन्द शतक अनुशीलन

(गतांक से आगे ...)

जीव में रस, रूप, गंध, स्पर्श, शब्द, संस्थान और व्यक्तता का अभाव होने पर भी वह स्वसंवेदन ज्ञान के बल से स्वयं सदा प्रत्यक्ष होने से **अकेले अनुमान से ही नहीं जाना जाता; स्वसंवेदन प्रत्यक्ष से भी जाना जाता है; अत: जीव अलिंगग्रहण है।**

प्रवचनसार में तो अलिंगग्रहण के बीस अर्थ किये हैं; पर यहाँ तो मात्र यही कहा है कि वह स्वसंवेदन ज्ञान के बल से प्रत्यक्षानुभूति का विषय बनता है; अत: उसे अकेले अनुमान का विषय नहीं माना जा सकता है; अत: **अलिंगग्रहण** है।

यहाँ अलिंगग्रहण का अर्थ शब्दार्थ के रूप में ऐसा समझना कि लिंग माने अनुमान, ग्रहण माने जानना और अ माने नहीं। तात्पर्य ऐसा है कि **भगवान आत्मा प्रत्यक्षानुभूति का विषय होने से अकेले अनुमान से ही नहीं जाना जाता; अत: अलिंगग्रहण है।**

अरस, अरूप, अगंध, अस्पर्श, अशब्द, अव्यक्त, अनिर्दिष्टसंस्थान और अलिंगग्रहण – ये आठ विशेषण तो निषेधपरक हैं; परन्तु **चेतनागुण वाला – यह नौवाँ विशेषण विधिपरक है।**

टीका के अन्त में कहा गया है कि इन अरसादि नौ विशेषणों से युक्त, चैतन्यस्वरूप, निर्मल प्रकाशवाला, एक भगवान आत्मा ही परमार्थ स्वरूप जीव है, जो इस लोक में पर से भिन्न ज्योतिस्वरूप टंकोत्कीर्ण विराजमान है।

इसप्रकार यहाँ उस भगवान आत्मा का स्वरूप स्पष्ट किया गया है कि जो मैं स्वयं हूँ, **जिसके साक्षात् दर्शन का नाम सम्यग्दर्शन है; जिसमें अपनापन करने का नाम, एकत्व स्थापित करने का नाम सम्यग्दर्शन है।**

पुद्गल से भिन्न होने के कारण अरस, अरूप, अगंध, अस्पर्श है और पुद्गल की शब्दरूप पर्याय से भिन्न होने के कारण अशब्द है। इसलिए यह भगवान आत्मा; रूप, रसादि विषयों के ग्रहण में निमित्तभूत इन्द्रियों के माध्यम से भी देखने-जानने में नहीं आता।

यह असंख्यातप्रदेशी आत्मा जिस शरीर में जाता है; उसी आकार का हो जाता है; इसप्रकार इस अव्यक्त आत्मा के आकार को बताया जाना भी संभव नहीं है।

इसीप्रकार उसके आकार को बताया जाना संभव न होने से वह **अनिर्दिष्टसंस्थान** है।

हाँ, यह अनुमान से जाना जाता है, पर अकेले अनुमान से ही नहीं जाना जाता; अनुभव से भी प्रत्यक्ष ज्ञात होता है; अत: इसे लिंग ग्रहण भी नहीं कहा जा सकता। यही कारण है कि इसे **अलिंगग्रहण** कहते हैं।

उक्त आठ विशेषणों से तो यह बताया है कि यह आत्मा कैसा नहीं है; अब इस **चेतनागुणवाला –** विशेषण से यह बताते हैं कि **यह भगवान आत्मा चेतनागुणवाला** है।

यह भगवान आत्मा लक्ष्य है और चेतनागुण उसका लक्षण है। **यह चेतनागुणवाला लक्षण सर्वथा निर्दोष लक्षण है, क्योंकि उसमें न अव्याप्ति, न अतिव्याप्ति और न असंभव दोष है।**

आचार्य कुन्दकुन्द कृत समयसार की आत्मख्याति टीका में इस गाथा का अर्थ करते हुए आचार्य अमृतचन्द्र अरस, अरूप, अगंध, अस्पर्श, अशब्द और अव्यक्त पदों के छह-छह अर्थ करते हैं और अनिर्दिष्ट-संस्थान पद के चार अर्थ करते हैं; किन्तु उन्होंने अलिंगग्रहण पद का अर्थ सामान्य सा करके ही छोड़ दिया है।

प्रवचनसार की तत्त्वप्रदीपिका टीका में अलिंगग्रहण पद पर जोर दिया है, उसके २० अर्थ किये हैं।

समयसार, प्रवचनसार और पंचास्तिकाय – इन तीनों ग्रंथों पर आचार्य

अमृतचन्द्र ने संस्कृत भाषा में जो टीकायें लिखीं, उनमें से किसी भी टीका में इस गाथा का अर्थ करते समय **चेतनागुण के संबंध में विशेष विस्तार नहीं किया है; किन्तु नियमसार में इस गाथा का अर्थ करते समय मुनिराज पद्मप्रभमलधारिदेव का ध्यान इसी पद पर केन्द्रित हैं, शेष पदों पर विशेष प्रकाश नहीं डाला। इसके पूर्व की गाथा के अर्थ में ही इस गाथा के अरसादि विशेषणों को समाहित कर लिया है;** क्योंकि उक्त गाथा में भी तो यही कहा है कि आत्मा में रूप, रस, गंध और स्पर्श नहीं है और इसमें भी यही कहा जा रहा है कि आत्मा अरस, अरूप, अगंध और अस्पर्श है। इसीप्रकार अन्य विशेषणों के बारे में भी विचार कर लेना चाहिए। चेतनागुण विशेषण के संदर्भ में यहाँ चेतना के भेद कर्मचेतना, कर्मफलचेतना और ज्ञानचेतना की चर्चा विस्तार से की है।

कहा गया है कि **स्थावर जीवों के कर्मफलचेतना की प्रधानता है;** क्योंकि सहज पुण्य-पाप के योग से उन्हें जो भी संयोग प्राप्त होते हैं, संयोगी भाव अर्थात् मोह-राग-द्वेषभाव होते हैं; वे तो उन्हें ही भोगते रहते हैं, उनका ही वेदन करते रहते हैं।

त्रस जीवों के कर्मचेतना सहित कर्मफलचेतना की प्रधानता होती है; क्योंकि पर में एकत्व-ममत्व होने से वे उनमें कुछ न कुछ करने और उन्हें भोगने के भावों में उलझे रहते हैं।

टीका में अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में लिखा गया है कि **कारणपरमात्मा और कार्यपरमात्मा को शुद्धज्ञानचेतना होती है।** यह तो स्पष्ट ही है कि कारणपरमात्मा तो उस त्रिकाली ध्रुव भगवान आत्मा को कहते हैं कि जो निगोद से लेकर मोक्ष तक के सभी जीवों के सदा विद्यमान है।

यही कारण है कि वह शुद्धज्ञानचेतना सभी जीवों में विद्यमान है और सभी को परम उपादेय है; क्योंकि उसके आश्रय से ही यह संसारी आत्मा सिद्ध बनता है।

उक्त कारणपरमात्मा के आश्रय से जो अरहंत-सिद्धरूप परमात्म दशा

प्रगट होती है; उसे कार्यपरमात्मा कहते हैं। इसप्रकार हम देखते हैं कि यहाँ कर्मचेतना और कर्मफलचेतना की मुख्यतावाले अज्ञानी जीवों और शुद्धज्ञानचेतनावाले अरहंत-सिद्धरूप पूर्ण ज्ञानियों की चर्चा तो की; किन्तु साधकदशा में विद्यमान जीवों की बात नहीं की।

समयसार और प्रवचनसार ग्रंथों की संस्कृत टीका में आचार्य अमृतचन्द्र ने इस गाथा की टीकायें विस्तार और गहराई से की हैं। मैंने भी उनके अनुशीलन में भगवान आत्मा का स्वरूप यथासाध्य स्पष्ट करने का प्रयास किया है। जिन्हें इस गाथा का भाव गहराई से समझना हो, वे उक्त अनुशीलन का अध्ययन करें।

अन्य ग्रन्थों में प्राप्त तत्संबंधी सामग्री का भी अध्ययन किया जाना चाहिए।

सामान्य अर्थ तो यहाँ स्पष्ट कर ही दिया गया है।

यद्यपि उक्त अनुशीलन में थोड़ी-बहुत पुनरावृत्ति हुई है; तथापि जटिल विषय के सरलीकरण के व्यामोह में यह सबकुछ अनिवार्य लगा।

प्रज्ञाछैनी

विगत गाथा में आत्मा का स्वरूप स्पष्ट करते हुए उसे जानने की प्रेरणा दी, आत्मा को ग्रहण करने की प्रेरणा दी है, अत: अब प्रश्न उपस्थित करते हैं कि आत्मा को किसप्रकार ग्रहण करें ? आखिर आत्मा को ग्रहण करने की विधि क्या है ?

(८)

कह सो घिप्पदि अप्पा पण्णाए सो दु घिप्पदे अप्पा।
जह पण्णाए विभत्तो तह पण्णा एव घेत्तव्वो।।

(हरिगीत)

जिस भाँति प्रज्ञाछैनी से पर से विभक्त किया इसे।
उस भाँति प्रज्ञाछैनी से ही अरे ग्रहण करो इसे।।

प्रश्न – भगवान आत्मा को किस प्रकार ग्रहण किया जाय?

उत्तर – भगवान आत्मा का ग्रहण बुद्धिरूपी छैनी से किया जाना

चाहिए। जिसप्रकार बुद्धिरूपी छैनी से भगवान आत्मा को परपदार्थों से भिन्न किया है; उसीप्रकार बुद्धिरूपी छैनी से ही भगवान आत्मा को ग्रहण करना चाहिए।

यह समयसार परमागम के मोक्षाधिकार की गाथा है। इसका नम्बर २९६ है। इसमें भगवान आत्मा को बंध से विभक्त कर ग्रहण करने की विधि बताई गई है। इसमें **आत्मा को ग्रहण करने का साधन एकमात्र भगवती प्रज्ञा को बताया गया है।**

ध्यान रहे, **आत्मा को बन्ध से भिन्न जानने और ग्रहण करने का सम्पूर्ण कार्य अपनी स्वयं की बुद्धि-विवेक से ही होता है;** इसमें अन्य किसी पर के सहयोग या किसी क्रियाकाण्ड की रंचमात्र भी आवश्यकता नहीं है।

प्रश्न – विभक्त करने और ग्रहण करने में मूलभूत अन्तर क्या है ?

उत्तर – अपना भगवान आत्मा और परपदार्थ, भिन्न-भिन्न तो स्वभावत: ही हैं। इसकारण इन्हें पृथक्-पृथक् करना नहीं है, अपितु पृथक्-पृथक् जानना ही है। इसप्रकार **पृथक्-पृथक् जानना और पृथक्-पृथक् करने का भाव एक ही है।**

स्वयं को ग्रहण करने का आशय यही है कि स्वयं को जाने, निजरूप जाने, निजरूप माने और स्वयं में ही समाहित रहे, जमा-रमा रहे। **स्वयं के जानने, माननेरूप परिणमित होने का नाम ही ग्रहण करना है।**

इसप्रकार विभक्त करना और ग्रहण करना – इन दोनों प्रक्रियाओं का साधन **एकमात्र प्रज्ञाछैनी ही है।**

मुक्ति प्राप्त करने के लिए समाधिस्थ होने के साधन (करण) की मीमांसा हो रही है। इस मीमांसा में निष्कर्षरूप से यह कहा गया है कि **मुक्ति की प्राप्ति का एकमात्र साधन तो प्रज्ञाछैनी ही है; इसलिए अन्य साधनों की खोज में भटकना ठीक नहीं है।**

उक्त संदर्भ में आचार्य अमृतचन्द्र का निम्नांकित कलश उल्लेखनीय है-

(स्रग्धरा)

प्रज्ञाछेत्री शितेयं कथमपि निपुणै: पातिता सावधानै:
सूक्ष्मेऽन्त:संधिबन्धे निपतति रभसादात्मकर्मोभयस्य।
आत्मानं मग्नमंत:स्थिरविशदलसद्धाम्नि चैतन्यपूरे
बन्धं चाज्ञानभावे नियमितमभित: कुर्वती भिन्नभिन्नौ।।१८१।।

(हरिगीत)

सूक्ष्म अन्त:संधि में अति तीक्ष्ण प्रज्ञाछैनि को।
अति निपुणता से डालकर अति निपुणजन ने बंध को॥
अति भिन्न करके आतमा से आतमा में जम गये।
वे ही विवेकी धन्य हैं जो भवजलधि से तर गये॥ १८१ ॥

अपने आत्मा को अपने अंतरंग तेज में स्थिर करती हुई तथा निर्मल और दैदीप्यमान चैतन्य प्रवाह में मग्न करती हुई एवं बंध को अज्ञानभाव में डालती हुई – इसप्रकार आत्मा और बंध को भिन्न करती हुई, यह प्रज्ञाछैनी प्रवीण पुरुषों द्वारा किसी भी प्रकार प्रयत्नपूर्वक सावधानी से डालने पर आत्मा और कर्मबंध के बीच की सूक्ष्म अन्त:सन्धि में अति शीघ्रता से पड़ती है।

तात्पर्य यह है कि यह प्रज्ञाछैनी आत्मा और बंध को छेद देती है, भिन्न-भिन्न कर देती है और उपयोग के अन्तर्मुख होने से आत्मा का अनुभव हो जाता है।

कविवर पण्डित बनारसीदासजी उक्त भाव को एक दोहे में इसप्रकार सोदाहरण स्पष्ट करते हैं –

(दोहा)

जैसै छैनी लोह की, करै एक सौं दोई।
जड़ चेतन की भिन्नता, त्यौं सुबुद्धि सौं होई॥

जिसप्रकार लोहे की छैनी एक के दो कर देती है; उसीप्रकार सुबुद्धि से जड़ और चेतन की भिन्नता हो जाती है।

पण्डित दौलतरामजी छहढाला में लिखते हैं –

जिन परम पैनी सुबुधि छैनी, डारि अन्तर भेदिया।
वरणादि अरु रागादि तैं, निज भाव को न्यारा किया।।

निज माहिं निज के हेतु, निज कर आपको आपै गह्यौ।
गुण-गुणी ज्ञाता-ज्ञान-ज्ञेय, मँझार कछु भेद न रह्यौ।।
जहँ ध्यान-ध्याता-ध्येय को, न विकल्प वच-भेद न जहाँ।
चिद्भाव कर्म चिदेश कर्ता, चेतना किरिया तहाँ।।
तीनों अभिन्न अखिन्न शुध, उपयोग की निश्चल दसा।
प्रगटी जहाँ दृग-ज्ञान-व्रत, ये तीनधा एकै लसा।।
परमाण-नय-निक्षेप को, न उद्योत अनुभव में दिखै।
दृग-ज्ञान-सुख बलमय सदा, नहिं आन भाव जु मो विषै।।
मैं साध्य-साधक मैं अबाधक, कर्म अरु तसु फलनि तैं।
चित्पिण्ड चण्ड अखण्ड सुगुणकरण्ड, च्युति पुनि कलनि तैं।।

जिन्होंने अत्यन्त तीक्ष्ण सुबुद्धिरूपी छैनी को अन्तर में डालकर वर्णादि परपदार्थों और रागादि विकारी भावों को भेद कर इनसे निज भगवान आत्मा को न्यारा किया अर्थात् न्यारा जानकर अपने में ही, अपने लिये, अपने द्वारा, अपने को, अपने आप ग्रहण कर लिया; तब गुण-गुणी में तथा ज्ञाता-ज्ञान-ज्ञेय में कुछ भी अन्तर नहीं रहा।

उस स्वरूपाचरण चारित्र अर्थात् शुद्धोपयोग की निश्चल दशा में ध्यान, ध्याता और ध्येय का भेदरूप विकल्प नहीं रहता, वचन का विकल्प भी नहीं रहता। वहाँ कर्त्ता, कर्म और क्रिया का भेद भी नहीं रहता; क्योंकि चिद्भाव ही कर्म है, चिदेश कर्ता है और चेतना क्रिया है – इसप्रकार ये तीनों अभिन्न हैं, अखिन्न हैं अर्थात् खेद से रहित हैं।

शुद्धोपयोग में ज्ञान-दर्शन-चारित्र की ऐसी दशा प्रगट हुई कि जिसमें ये दर्शन, ज्ञान और चारित्र तीन होकर भी एकरूप में ही शोभायमान हो रहे हैं; अनेकाकार न होकर एकाकार हो रहे हैं।

अनुभव अर्थात् शुद्धोपयोग के काल में प्रमाण, नय और निक्षेपों का उद्योत भी नहीं होता। अनुभव में तो ऐसा भासित होता है कि **मैं तो सदा ही दर्शन, ज्ञान, सुख और वीर्यमय हूँ और अन्य कोई भाव मुझमें नहीं है। मैं**

ही साध्य हूँ, मैं ही साधक हूँ और मैं कर्म और उसके फलों से अबाधक हूँ; प्रचण्ड चैतन्य का पिण्ड हूँ, अखण्ड हूँ और सुगुणों का करण्ड (पिटारा) हूँ और पर्यायों में होनेवाले उतार-चढ़ाव से रहित हूँ।

समयसार परमागम के जीवाजीवाधिकार में वर्णादि में २० प्रकार के पदार्थ लिये हैं और रागादि भाव में ९ प्रकार के विकारी भाव लिये हैं। पर और पर्याय से भिन्न भगवान आत्मा उक्त २९ प्रकार के भावों से भिन्न है। **यही भगवान आत्मा दृष्टि का विषय है,** परमशुद्ध निश्चयनयरूप ज्ञान का **ज्ञेय** है और ध्यान का **ध्येय** है। इसी भगवान आत्मा के दर्शन का नाम सम्यग्दर्शन, इसे जानने का नाम सम्यग्ज्ञान और इसमें ही जमने-रमने का नाम सम्यक्चारित्र है।

आत्मा ने यह कार्य न तो दूसरों से कराया है और न दूसरों के सहयोग से किया है; अपितु पर से भिन्न अपने आत्मा को, अपने लिये, अपने में, अपने द्वारा स्वयं ही ग्रहण किया है अर्थात् जान लिया है।

यह जान लिया है कि यह ज्ञानानन्द स्वभावी आत्मा मैं ही हूँ।

जब यह आत्मानुभवन की प्रक्रिया चलती है; तब ऐसे विकल्प नहीं उठते कि ज्ञान गुण है, आत्मा गुणी है; आत्मा ज्ञाता है, जानना ज्ञान है और जो जानने में आ रहा है, वह आत्मा ज्ञेय है।

तात्पर्य यह है कि उक्त स्वरूपाचरण की अवस्था में गुण-गुणी और ज्ञाता-ज्ञान-ज्ञेय संबंधी विकल्प खड़े नहीं होते।

जिसप्रकार ज्ञाता-ज्ञान-ज्ञेय संबंधी विकल्प खड़े नहीं होते; उसीप्रकार ध्यान-ध्याता-ध्येयसंबंधी विकल्प भी खड़े नहीं होते; वचनसंबंधी विकल्प खड़े नहीं होते। कर्ता-कर्म-क्रिया के सन्दर्भ में भी यही स्थिति है; क्योंकि चिदेश आत्मा कर्त्ता है, चिद्भाव (ज्ञान-दर्शन) कर्म है और चेतना (जानना-देखना) क्रिया है। एक द्रव्य की मर्यादा के भीतर होने से तीनों एक ही हैं, एक आत्मा ही हैं।

शुद्धोपयोग अर्थात् स्वरूपाचरण की दशा में तीनों अभिन्न ही हैं; इसलिये अखिन्न हैं; किसी प्रकार की खिन्नता शुद्धोपयोग के समय नहीं

होती।

शुद्धोपयोग में दर्शन-ज्ञान-चारित्र की ऐसी निश्चल दशा प्रगट हो गई है कि जिसमें ये दर्शन-ज्ञान-चारित्र तीन होकर भी एकरूप में ही शोभायमान हो रहे हैं।

अनुभूति के काल में प्रमाण-नय-निक्षेप का उदय भी नहीं होता। तात्पर्य यह है कि प्रमाण-नय-निक्षेप संबंधी विकल्प भी खड़े नहीं होते। उसमें तो ऐसा भासित होता है कि मैं तो सदा ही ज्ञान, दर्शन, सुख और बलमय हूँ; इनके अतिरिक्त कोई अन्य भाव मुझमें नहीं है।

मैं ही साध्य हूँ और मैं ही साधक हूँ तथा कर्म और कर्मफलों से मैं सदा ही अबाधक हूँ। तात्पर्य यह है कि मुझमें साध्य-साधक का भी भेद नहीं है, विकल्प नहीं है और कर्मचेतना और कर्मफलचेतना की बाधा नहीं है; क्योंकि मैं तो ज्ञानचेतनारूप हूँ। मैं चैतन्य का पिण्ड हूँ, प्रचण्ड हूँ, अखण्ड हूँ और गुणों का पिटारा हूँ तथा सभी प्रकार के विकारी भावों से रहित हूँ।

देशनालब्धि में गुरुमुख से सुनकर किये गये निर्णय के अनुसार पहले विकल्प की भूमिका में ऐसे विकल्प चलते थे कि मैं ही ज्ञान हूँ, मैं ही ज्ञाता हूँ, मैं ही ज्ञेय हूँ; मैं ही ध्यान हूँ, मैं ही ध्याता हूँ और मैं ही ध्येय हूँ; मैं ही कर्त्ता हूँ, मैं ही कर्म हूँ, मैं ही करण हूँ, मैं ही सम्प्रदान हूँ, मैं ही अपादान हूँ और मैं ही अधिकरण हूँ; मैं प्रमाण का विषय हूँ या शुद्धनय का विषय हूँ, मैं प्रत्यक्ष हूँ या परोक्ष हूँ।

अनुभव के काल में उक्त सभी विकल्पजाल समाप्त हो जाता है और एक अचल, अखण्ड, अभेद, निर्विकल्प भगवान आत्मा ही एकमात्र मैं हूँ – इसप्रकार का विकल्पों से रहित अनुभव (ज्ञान) रह जाता है।

इस निर्विकल्पज्ञान के ज्ञेयभूत भगवान आत्मा में 'यह मैं हूँ' – ऐसा अपनापन बना रहता है और ध्यान का ध्येय भी वही अभेद-अखण्ड आत्मा बना रहता है। – इसी का नाम अनुभव है, शुद्धोपयोग है और स्वरूपाचरण है।

जो जैसा जाने...

(९)

सुद्धं तु वियाणंतो सुद्धं चेवप्पयं लहदि जीवो।
जाणंतो दु असुद्धं असुद्धमेवप्पयं लहदि।।

(हरिगीत)

जो जानता मैं शुद्ध हूँ वह शुद्धता को प्राप्त हो।
जो जानता अविशुद्ध वह अविशुद्धता को प्राप्त हो।।

शुद्धात्मा को जानता हुआ अर्थात् शुद्धात्मा का अनुभव करता हुआ जीव शुद्धात्मा को प्राप्त करता है और अशुद्ध आत्मा को जानता हुआ – अनुभवता हुआ जीव अशुद्ध आत्मा को प्राप्त करता है।

तात्पर्य यह है कि **अपने आत्मा के शुद्ध स्वभाव में अपनापन स्थापित करनेवाला शुद्धता को प्राप्त करता है** और अशुद्ध स्वभाव में अपनापन स्थापित करनेवाला अशुद्ध रहता है।

यह गाथा समयसार नामक शास्त्र के संवर अधिकार की १८६वीं गाथा है।

इसमें यह समझाया गया है कि शुद्धात्मा की उपलब्धि से संवर कैसे होता है ?

इस गाथा का अर्थ आत्मख्याति टीका में आचार्य अमृतचन्द्र इसप्रकार समझाते हैं –

''जो अविछिन्नधारावाही ज्ञान से सदा शुद्धात्मा का अनुभव किया करता है; वह **'ज्ञानमय भाव से ज्ञानमय भाव ही होता है'** – इस न्याय से आगामी कर्मों के आस्रवण की निमित्तभूत राग-द्वेष-मोह की संतति का निरोध होने से शुद्धात्मा को ही प्राप्त करता है और जो अज्ञान से सदा ही अशुद्धात्मा का अनुभव किया करता है; वह **'अज्ञानमय भाव से अज्ञानमय भाव ही होता है'** – इस न्याय से आगामी कर्मों के आस्रवण की निमित्तभूत

मोह-राग-द्वेष की संतति का निरोध न होने से अशुद्धात्मा को ही प्राप्त करता है। अत: यह सिद्ध हुआ कि **शुद्धात्मा की उपलब्धि (अनुभव) से ही संवर होता है।''**

रागी को राग में एकता होने से राग की अविच्छिन्नधारा ही प्रवाहित होती है तथा समकिती ज्ञानी के राग से भिन्नता हो जाने से अविच्छिन्न ज्ञानधारा प्रवाहित होती है।

ज्ञानी सदा ही अविच्छिन्नधारावाही आत्मा की शुद्धदृष्टि से परिणमित होने से, अविच्छिन्नरूप से शुद्ध ज्ञानमय परिणमन को प्राप्त हो जाते हैं। उनके ज्ञान व आनन्द के वेदनरूप परिणमन में भंग नहीं पड़ता।

'ज्ञानमयभाव में से ज्ञानमयभाव ही होता है।' – इस न्याय से ज्ञानी के नये कर्म आने में निमित्तभूत राग-द्वेष-मोह की संतति का निरोध हो जाता है। बस, वस्तुत: इसी संततिनिरोध का नाम संवर है। **ज्ञान की धारावाही एकाग्रता की प्रगटता और रागमयभाव का निरोध होना ही तो वास्तविक संवर है।**

इसप्रकार इस गाथा में यही कहा गया है कि जो जीव अपने आत्मा को परपदार्थों और उनके लक्ष्य से होनेवाले रागादि से भिन्न अनुभव करते हैं, उसे निज जानते-मानते हैं; उसी में अपनापन स्थापित कर जहाँ तक संभव हो, उसी में रमण करते हैं, उसी में लीन हो जाते हैं; वे जीव स्वयं शुद्धात्मा को प्राप्त करते हैं, सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप परिणमित हो जाते हैं, अनन्तसुखी हो जाते हैं, सिद्धदशा को प्राप्त हो जाते हैं।

जो जीव आत्मा को अशुद्ध अनुभव करते हैं, उसे रागी-द्वेषी-मोही मानते हैं, जानते हैं; गोरा-भूरा मानते हैं, जानते हैं; वे जीव अशुद्धता को प्राप्त होते हैं, राग-द्वेष-मोहरूप परिणमित होते रहते हैं।

अत: आत्मार्थी भाई-बहिनों का यह परम कर्तव्य है कि वे अपने आत्मा को सही रूप में, शुद्धरूप में जानें-पहिचानें, उसी में अपनापन स्थापित करें, जिससे शुद्धात्मा को प्राप्त कर शुद्धतारूप परिणमित होकर अनन्त सुख-शान्ति प्राप्त कर सकें। **(क्रमश:)**

छहढाला प्रवचन

निजात्म-ध्यान की प्रेरणा

पुण्य-पाप फल मांहि, हरख बिलखौं मत भाई।
यह पुद्गल परजाय, उपजि विनसै फिर थाई।।
लाख बात की बात, यहै निश्चय उर लाओ।
तोरि सकल जग दन्द-फन्द, निज आतम ध्याओ।।९।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान पण्डित दौलतरामजीकृत छहढाला की चौथी ढाल पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

(गतांक से आगे....)

जैसे मेरुपर्वत की दक्षिण दिशा में अपना यह भरत क्षेत्र है, वैसे ही उसकी पूर्व दिशा में विदेह क्षेत्र है, वहाँ सीमन्धर तीर्थंकर आदि भगवन्त विचर रहे हैं, इन्द्र और गणधर उनकी वाणी में आत्मा का स्वरूप सुनते हैं और स्वयं उसका अनुभव करते हैं। ऐसे सीमन्धर परमात्मा के पास यहाँ से कुन्दकुन्दाचार्य देव साक्षात् गये थे। वे इस भरत क्षेत्र के महान स्वानुभवी सन्त थे। उन्होंने समयसार आदि परमागम रचे हैं। इन ग्रन्थों में अन्तर के चैतन्य के अनुभव को स्पर्श करके आत्मा की अनुभूति का अलौकिक उपदेश किया है, चैतन्य का अपार वैभव समयसार में स्पष्ट करके दिखाया है। ऐसे ही पूर्वाचार्यों का अनुसरण करके पण्डित दौलतरामजी ने विक्रम संवत् १८९१ में इस छहढाला की रचना की है।

उसमें कहते हैं कि अहो जीवो ! लाख बात की बात यह है कि तुम निश्चय से आत्मा को पुण्य-पाप से भिन्न जानकर अन्तर में ध्यावो। पुण्य-पाप से पार अनन्त चैतन्यशक्ति से परिपूर्ण स्वसंवेद्य आत्मा है, उसे अन्तर्मुख होकर वेदन में लो। पुण्य-पाप से वह आत्मा वेदन में नहीं आता, अपनी ही उपयोग शक्ति से वह स्वयं अपना प्रत्यक्ष स्वसंवेदन करता है और ऐसे स्वसंवेदन में भगवान आत्मा अपने सच्चे स्वरूप में प्रसिद्ध होता है। इसलिए मुमुक्षु को यही कार्य

वास्तव में करने योग्य है, लाख उपाय से भी इसी को करना चाहिए।

अरे ! मेरे करने योग्य काम तो आत्मा की पहिचान है; परन्तु मैंने वह तो आज तक की नहीं। राग से पार चैतन्य की स्वानुभूति में आत्मा प्रकट होता है, चैतन्य का परम सुख वेदन में आता है। ऐसी आनन्दमय स्वानुभूति कैसे हो ? राग के आश्रय से नहीं, पर के लक्ष से नहीं, अपने अन्दर गहरे जहाँ राग का प्रवेश नहीं, ऐसे भूतार्थ चैतन्य स्वभाव में प्रवेश करने पर आत्मा की स्वानुभूति होती है।

यहाँ (सोनगढ) जैन मंदिर में फागुन सुदी द्वितीया को सीमन्धर भगवान की प्रतिष्ठा हुई थी। कल उसकी वर्षगांठ का दिवस है और आज यहाँ आत्मा की स्वानुभूति से चैतन्य प्रभु को अपने में पधराने की बात है। अन्तर में आत्मा की पहिचान बिना भगवान की भी सच्ची पहिचान नहीं होती। पर से भिन्न, राग से पार, अपार गुण सम्पन्न आत्मा की श्रद्धा करना ही मोक्षमहल की सीढी है। जिसने ऐसी श्रद्धा की, उसने अनन्त भगवन्तों को अपने अन्तर में स्थापित करके मोक्ष सन्मुख मंगल प्रयाण किया।

सम्यक्दर्शन में सिद्ध जैसे अतीन्द्रिय आनन्द का स्वाद आता है, उसके बिना ज्ञान-चारित्र आदि सच्चे नहीं होते। शास्त्र का पढना या शुभराग का आचरण आदि सब सम्यग्दर्शन के बिना निरर्थक है, सम्यग्दर्शन बिना वे सब मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्र हैं अर्थात् संसार के ही कारण हैं, मोक्ष के कारण नहीं हैं। इसलिए कहते हैं कि हे भाई ! तू ऐसे पवित्र सम्यग्दर्शन को तथा सम्यग्ज्ञान को उद्यम से धारण कर। इस अवसर में लाख-करोड़ उपाय बनाकर भी, बाहर की अन्य सभी बातों को छोड़कर अन्तर में अपनी आत्मा की अनुभूति करके, सच्ची श्रद्धा-ज्ञान उत्पन्न कर तो तुझे अपूर्व आनन्द की उपलब्धि होगी।

अधिक क्या कहें ! लाखों बातों का सार इतना ही है कि हे सुज्ञ पुरुषों ! अनन्त काल तो सम्यग्दर्शन बिना बीत गया; किन्तु जो हुआ सो हुआ, अब इस अवसर में सम्यग्दर्शन बिना अल्पकाल भी मत गंवाना। वीर प्रभु के जिन

शासन में ऐसा अवसर पाकर अब तो सम्यग्दर्शन प्रकट करो। शीघ्र चेत जाओ, दुनिया को प्रसन्न करने के लिए समय बर्बाद मत करो। अपनी आत्मा क्या है उस तरफ लक्ष करके उसकी आराधना करो, उसका सम्यक् अनुभव करो। सम्यक्त्व रत्न की प्राप्ति का यह अवसर है, उसी उत्तम रत्न से मोक्ष प्राप्त होगा। अनन्त काल तो दु:ख में गया; परन्तु अब तो सम्यग्दर्शन करके आत्मा के सुख का अनुभव करो। अनन्त जीव ऐसा अनुभव करके मोक्ष गए हैं, तुम भी आत्मानुभव करके मोक्ष प्राप्त करो।

शरीर और कर्म की तो कथा ही क्या ? वे तो अजीव हैं, परद्रव्य हैं, जीव से भिन्न हैं, शुभाशुभराग भी चैतन्य स्वभाव से पार है, भिन्न है और अल्प विकासवाली अधूरी पर्याय जितना सम्पूर्ण आत्मा नहीं है। आत्मा तो पूर्ण स्वभाव से भरा है, उसमें से ही केवलज्ञानादि प्रकट होते हैं, वही उसका पूरा कार्य है; इसलिए पर की, विकार की और अल्प पर्याय के भेद की दृष्टि छोड़कर, पूर्ण स्वभाव से भरे हुए भगवान के सन्मुख होकर उसकी श्रद्धा-ज्ञान करना ही सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान है, वही आनन्द रूप है, वही मोक्षमार्ग है।

पूर्णानन्दी प्रभु भगवान आत्मा स्वयं विराज रहा है, उसको भजते ही वह मोक्षमार्ग और मोक्ष प्रदान करता है। अनन्त जीव अपने अन्तर में उसको ही भज-भजकर सम्यग्दर्शन को प्राप्त हुए और जो प्राप्त होंगे वे भी उसकी ही सन्मुखता से पावेंगे। सम्यग्दर्शन के लिए तीन काल का नियम है और सभी जीवों पर लागू पड़ता है। इसके अतिरिक्त अन्य किसी उपाय से सम्यग्दर्शन प्राप्त नहीं होता और सम्यग्दर्शन के बिना मोक्ष नहीं मिलता। अत: हे भव्य जीव ! सर्वप्रथम आत्मसन्मुख होकर सम्यक् श्रद्धा-ज्ञान प्रकट करो। **(क्रमश:)**

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो - वीडियो प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें -
वेबसाईट - www.vitragvani.com
संपर्क सूत्र-श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
Ph.: 022-26130820, 26104912, E-Mail- info@vitragvani.com

नियमसार प्रवचन -

निश्चय चारित्र की सूचना

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार के शुद्धभावाधिकार की 76वीं गाथा पर हुये आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरस गर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है।

गाथा मूलत: इसप्रकार है -

एरिसयभावणाए ववहारणयस्स होदि चारित्तं।
णिच्छयणयस्स चरणं एत्तो उड्ढं पवक्खामि।।७६।।

(हरिगीत)

इसतरह की भावना व्यवहार से चारित्र है।
अब कहूँगा मैं अरे निश्चयनयाश्रित चरण को।।७६।।

यह, व्यवहारचारित्र-अधिकार के व्याख्यान के उपसंहार का और निश्चयचारित्र की सूचना का कथन है।

(गतांक से आगे....)

अब आगे कहे जाने वाले पाँचवें अधिकार में, परमपंचमभाव में लीन, पंचमगति में हेतुभूत, शुद्धनिश्चयनयात्मक परमचारित्र दृष्टव्य है। जिसमें क्षायिकभाव का भी अवलम्बन नहीं, जिसमें औदयिक आदि चार भावों का भी सहारा नहीं, ऐसे त्रिकाल निरपेक्ष परमपारिणामिकभाव का अवलम्बन लेकर उसमें लीन होना ही निश्चय अर्थात् सच्चा चारित्र है। यह निश्चयचारित्र पंचमगति अर्थात् मोक्ष का कारण है।

वास्तव में तो निश्चयचारित्र भी मोक्षगति का निमित्तकारण है। मोक्ष का सच्चा उपादानकारण तो त्रिकाली परमपारिणामिकभाव ही है। यहाँ कोई बाहर के निमित्त की बात नहीं, पुण्य की या शुभभाव की भी बात नहीं; तथा क्षायिक पर्याय भी मोक्ष का उपादान कारण नहीं, अतः उसकी भी बात नहीं। यहाँ तो त्रिकाली परमपारिणामिकभाव अर्थात् पंचमभाव

की बात है, वही मोक्षपर्याय का उपादान कारण है। तथा छठवें गुणस्थान में शुभभावरूप व्यवहार हो, उसको यहाँ निमित्त कहने की बात नहीं है; किन्तु मुनिपने के वीतरागदशारूपचारित्र को मोक्षपर्याय का निमित्तकारण अर्थात् व्यवहारकारण कहा है और उस निर्विकल्प वीतरागदशारूप निश्चयचारित्र का उपादानकारण पंचम परमपारिणामिक भाव है।

बाह्य आचरण करो, कुछ क्रिया करो, व्रत-उपवास करो तो व्यवहारचारित्र होता है और उस व्यवहारचारित्र से निश्चयचारित्र होता है – ऐसी तो यहाँ बात भी नहीं है, ऐसा जो माने वह तो मिथ्यादृष्टि है। जिसको निश्चय प्रगट नहीं हुआ, उसका व्यवहार स्वर्ग का कारण है, मोक्ष का कारण तो व्यवहार से भी नहीं।

(वंशस्थ)

''कुसूलगर्भस्थितबीजसोदरं भवेद्विना येन सुदृष्टिबोधनम्।
तदेव देवासुरमानवस्तुतं नमामि जैनं चरणं पुनः पुनः।।''

कोठार के भीतर पड़े ज्यों बीज उग सकते नहीं।
बस उसतरह चारित्र बिन दृग-ज्ञान फल सकते नहीं।।
असुर मानव देव भी थुति करें जिस चारित्र की।
मैं करूँ वंदन नित्य बारंबार उस चारित्र को।। ३६।।

जिसके बिना **(जिस चारित्र के बिना)** सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान कोठार के भीतर पड़े हुए बीज **(अनाज)** समान हैं, उसी देव-असुर-मानव से स्तवन किये गये जैन चरण को **(ऐसा जो सुर-असुर मनुष्यों से स्तवन किया गया जिनोक्त चारित्र उसे)** मैं पुनः पुनः नमन करता हूँ।''

सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान बोधिबीज हैं, उस बीज को उगावे तो चारित्ररूपी वृक्ष होवे और तब उसका वास्तविक फल प्राप्त हो। कोठार में बीज तो है अर्थात् सम्यग्दर्शन-ज्ञान तो है; परन्तु चारित्ररूपी वृक्ष उत्पन्न नहीं हुआ – फल नहीं आया।

यहाँ चारित्र की महिमा का वर्णन किया है। उस वीतरागी अकषायरूप चारित्र का देव तथा असुर स्तवन करते हैं – पूजते हैं। ऐसा अकषाय-रमणतारूप चारित्र वीतरागमार्ग में होता है। वीतरागमार्ग के अतिरिक्त यदि नग्न रहे, तप करे, ध्यान करे; तथापि सम्यग्दर्शन-ज्ञान किंचित् भी होता नहीं; फिर भला चारित्र तो तीन काल में भी कैसे हो सकता है?

वीतराग के मुखकमल से निकला हुआ जो वीतराग चारित्र अर्थात् आत्मस्वरूप में लीनतारूप चारित्र – उसे मैं बारम्बार नमस्कार करता हूँ। वीतराग सर्वज्ञ द्वारा कहे हुए मार्ग के अलावा कोई योग करे, वह सब थोथा है, मिथ्यादृष्टि की कल्पनामात्र है, उससे आत्मकल्याण होना संभव नहीं है। वीतराग मार्ग में कथित जीवसंख्या अनन्त है, पुद्गल-अनन्तानन्त हैं, एक धर्मास्तिकाय, एक अधर्मास्तिकाय, एक सर्वव्यापी अखण्ड आकाश और असंख्य कालाणु – इसप्रकार जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त गुण हैं और उनकी एक समय में अनन्त पर्यायें हैं – इन सबको एक समय में जानने की शक्ति आत्मा में है। इसप्रकार आत्मा के स्वभाव को न माने और योग के बखेड़े में पड़ जायेगा तो ज्ञान का परिणमन अनुक्रम से हीन होता जायेगा और एकेन्द्रिय बन जायेगा; चतुर्गति में भ्रमण करके हैरान हो जायेगा।

आत्मा अकेला चैतन्यबिम्ब है, उसका कोई कारण नहीं है; आत्मवस्तु स्वयंसिद्ध है; ऐसे आत्मा की रुचि किये बिना महाव्रत पालन करे, क्रियाकाण्ड में लीन रहे, तो भी कल्याण नहीं होगा। यह खाऊँ, यह पीऊँ, यह ग्रहण करूँ, यह छोड़ूँ – इत्यादि तो जड़ की क्रिया है और पुण्य-पाप के भाव विकल्प हैं – विकारीभाव हैं। उन दोनों से रहित ऐसे त्रिकाली ज्ञानानन्द आत्मस्वभाव के भान बिना महाव्रत आदि सब क्लेशरूप हैं, उनसे आत्म-कल्याण रंचमात्र भी नहीं है। इसलिए आत्मा के भानसहित वीतरागीरमणता स्वरूप अन्तरचारित्र को मैं पुनः पुनः नमता हूँ।

(आर्या)

शीलमपवर्गयोषिदनंगसुखस्यापि मूलमाचार्याः।
प्राहुर्व्यवहारात्मकवृत्तमपि तस्य परंपरा हेतुः ।।१०७।।

(अडिल्ल)

आत्मरमणतारूप चरण ही शील है।
निश्चय का यह कथन शील शिवमूल है।।
शुभाचरण मय चरण परम्परा हेतु है।
सूरिवचन यह सदा धर्म का मूल है।।१०७।।

आचार्यों ने शील को **(निश्चयचारित्र को)** मुक्तिसुंदरी के अनंग **(अशरीरी)** सुख का मूल कहा है; व्यवहारात्मक चारित्र भी उसका परम्परा कारण है।

इसप्रकार, सुकविजनरूपी कमलों के लिये जो सूर्य समान हैं और पाँच इन्द्रियों के विस्तार रहित देहमात्र जिन्हें परिग्रह था ऐसे श्री पद्मप्रभमलधारिदेव द्वारा रचित नियमसार की तात्पर्यवृत्ति नामक टीका में (अर्थात् श्रीमद्भगत्कुन्दकुन्दाचार्यदेव प्रणीत श्री नियमसार परमागम की निर्ग्रन्थ मुनिराज श्री पद्मप्रभमलधारिदेव विरचित तात्पर्यवृत्ति नामक टीका में) व्यवहारचारित्र अधिकार नाम का चौथा श्रुतस्कन्ध समाप्त हुआ।

(क्रमशः)

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

2 से 9 अप्रैल	आत्मसाधना केन्द्र दिल्ली	कन्या निकेतन का दीक्षान्त समारोह एवं उपकार दिवस
24 से 28 अप्रैल	देवलाली-नासिक	गुरुदेवश्री जयन्ती
21 मई से 7 जून	खनियांधाना (म.प्र.)	प्रशिक्षण शिविर
9 जून से 9 जुलाई	विदेश	तत्त्वप्रचारार्थ
16 से 20 जुलाई	चैतन्यधाम-अहमदाबाद	गुरुमंथनवाणी शिविर
23 जुलाई से 1 अग.	जयपुर	महाविद्यालय शिविर

समयसार की 47 शक्तियों पर प्रवचन

समयसार कलश 262

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी द्वारा समयसार की 47 शक्तियों पर किये गये प्रवचनों को इसी अंक से क्रमशः प्रकाशित किया जा रहा है। भूमिका के रूप में समयसार कलश 262 व 263 से प्रारम्भ किया गया प्रकरण पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत है।

पूर्वोक्त प्रकार से अनेकान्त, अज्ञान से मूढ़ हुए जीवों को ज्ञानमात्र आत्मतत्त्व प्रसिद्ध कर देता है - समझा देता है' इस अर्थ का काव्य कहा जाता है -

(अनुष्टुप्)

इत्यज्ञानविमूढ़ानां ज्ञानमात्रं प्रसाधयन्।
आत्मतत्त्वमनेकांतः स्वयमेवानुभूयते ।।२६२।।

(इति) इसप्रकार **(अनेकान्तः)** अनेकान्त अर्थात् स्याद्वाद **(अज्ञान-विमूढ़ानां ज्ञानमात्रं आत्मतत्त्वम् प्रसाधयन्)** अज्ञानमूढ़ प्राणियों को ज्ञानमात्र आत्मतत्त्व प्रसिद्ध करता हुआ **(स्वयमेव अनुभूयते)** स्वयमेव अनुभव में आता है।

भावार्थ - ज्ञानमात्र आत्मवस्तु अनेकान्तमय है; परन्तु अनादिकाल से प्राणी अपने आप अथवा एकान्तवाद का उपदेश सुनकर ज्ञानमात्र आत्मतत्त्व संबंधी अनेक प्रकार से पक्षपात करके ज्ञानमात्र आत्मतत्त्व का नाश करते हैं। उनको (अज्ञानी जीवों को) स्याद्वाद ज्ञानमात्र आत्मतत्त्व का अनेकान्तस्वरूपपना प्रगट करता है - समझाता है।

यदि अपने आत्मा की ओर दृष्टिपात करके-अनुभव करके देखा जाये तो (स्याद्वाद के उपदेशानुसार) ज्ञानमात्र आत्मवस्तु अपने आप अनेक धर्मयुक्त प्रत्यक्ष अनुभवगोचर होती है।

इसलिए हे प्रवीण पुरुषों! तुम ज्ञान को तत्स्वरूप, अतत्स्वरूप, एकस्वरूप,

अनेकस्वरूप, अपने द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से सत्स्वरूप, पर के द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से असत्स्वरूप, नित्यस्वरूप, अनित्यस्वरूप इत्यादि अनेक धर्मस्वरूप प्रत्यक्ष अनुभवगोचर करके प्रतीति में लाओ। यही सम्यग्ज्ञान है। सर्वथा एकान्त मानना वह मिथ्याज्ञान है।

कलश २६२ एवं भावार्थ पर प्रवचन

देखो; यहाँ अनेकान्त एवं स्याद्वाद का एक ही अर्थ में प्रयोग किया गया है। **वस्तुतः अनेकान्त वस्तु का स्वरूप है और स्याद्वाद वस्तु के अनेकान्त स्वरूप का द्योतक है, बतानेवाला या कथन करनेवाला है। स्याद्वाद अर्थात् सापेक्षकथन करना।**

'स्यात्' अर्थात् अपेक्षा बताकर और 'वाद' माने कथन करना। इसप्रकार स्याद्वाद अनेकान्तस्वरूप वस्तु के कथन करने की पद्धति है, शैली है।

जैसे कि - आत्मा नित्य है - यह कथन द्रव्य की अपेक्षा किया गया है, इस समय आत्मा में विद्यमान अनित्य धर्म को गौण कर दिया है तथा जब यह कहेंगे कि - आत्मा अनित्य है तो यह कथन पर्याय की अपेक्षा से किया गया है। इस कथन में द्रव्य का नित्य धर्म गौण है।

इसप्रकार स्याद्वाद अपेक्षा से वस्तु में विद्यमान परस्पर विरोधी दो धर्मों को मुख्य-गौण करके कथन करने की शैली द्वारा अनेकान्तस्वरूप वस्तु को सिद्ध करता है, वस्तु के यथार्थ स्वरूप को बताता है।

यहाँ अनेकान्त व स्याद्वाद का वाचक-वाच्य संबंध का भेद बतानेवाला - ऐसा अर्थ न करके दोनों को पर्यायवाची के रूप में ही प्रयोग किया है।

इसलिए कहते हैं कि - इसप्रकार अनेकान्त, अज्ञान से विमूढ़ प्राणियों को ज्ञानमात्र आत्मा प्रसिद्ध करता है। अहाहा...! अनेकान्त को जानते हुए स्व-स्वरूप वस्तु आत्मा स्वयमेव अनुभव में आ जाता है। आत्मवस्तु को जाननेरूप पर्याय स्वयमेव अपने से ही परिणमति है, पर से नहीं। **(क्रमशः)**

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : अनादि से चली आ रही सबसे बड़ी मूर्खता क्या है ?

उत्तर : जिसका करना अशक्य हो, उसे करने की बुद्धि होना ही मूर्खता है। देहादि के कार्य मैं कर सकता हूँ, हस्त-पादादि को मैं हिला-डुला सकता हूँ, परद्रव्य के कार्य मैं कर सकता हूँ - यह समस्त विचार शृंखला अबुद्धिमत्तापूर्ण है।

मैं पर जीवों को सुखी अथवा दुःखी कर सकता हूँ, मार या बचा सकता हूँ, देश-कुटुम्ब आदि की सेवा कर सकता हूँ - ऐसी बुद्धि होना ही मूर्खता पूर्ण है।

परद्रव्य की कोई भी क्रिया-परिणति उसके अपने ही आधीन है, अन्य द्रव्य के द्वारा उसका किया जाना अशक्य है; तथापि उसका कर्तृत्व की बुद्धि होना मिथ्यात्वभाव की मूर्खता है तथा जो कार्य अपने द्वारा ही किया जा सकता है - ऐसे अपने स्वरूप की सच्ची श्रद्धा, सच्चा ज्ञान, सच्चा आचरण यह जीव नहीं करता है - यह उसकी दूसरी बड़ी मूर्खता है।

प्रश्न : एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता - इस सिद्धान्त में यह बात तो समझ में आती है कि एक जीव दूसरे जीव का कुछ नहीं करता; परन्तु एक परमाणु दूसरे परमाणु का कुछ नहीं करता - यह बात जँचती नहीं।

उत्तर : एक परमाणु स्वतंत्र है, वह भी स्वयं कर्त्ता होकर अपने कार्य को करता है, दूसरे परमाणु का उसमें अत्यंत अभाव है। यदि इससे आगे बढ़कर थोड़ा सूक्ष्म विचार करें तो पुद्गल द्रव्य की पर्याय स्वयं से स्वतंत्र होती है, द्रव्य भी उसका कारण नहीं है। भाई ! वीतराग की बात बहुत सूक्ष्म है।

प्रश्न : आप कहते हो कि शरीर तेरा नहीं और राग भी तेरा नहीं; परन्तु हमें तो रात-दिन इन दोनों से ही काम पड़ता है, अब क्या करें ?

उत्तर : शरीर तो अपने कारण से षट्कारकरूप स्वतंत्र परिणमन करता है और

उसीप्रकार राग भी अपने कारण ही षट्कारक से परिणमन करता है। तू तो इन दोनों का मात्र ज्ञायक है। एक समय में पर्याय षट्कारक से स्वतंत्र परिणमती है – द्रव्य के कारण नहीं तथा पूर्व पर्याय के कारण उत्तर पर्याय परिणमती हो – ऐसा भी नहीं है। प्रत्येक पदार्थ की पर्याय प्रतिसमय षट्कारक से स्वतंत्रपने ही परिणमती है – यह वस्तुस्थिति है। भाई ! तेरा तत्त्व तो परिपूर्ण ज्ञायकभाव से परिपूर्ण है, वह जानने के अतिरिक्त और क्या करे ?

प्रश्न : परद्रव्य का कार्य भले ही नहीं कर सकते; किन्तु अनासक्तिभाव से पर को सुखी करे – अनुकूलता प्रदान करे तो ?

उत्तर : 'पर को मैं सुखी कर सकता हूँ, अनुकूलता प्रदान कर सकता हूँ' – यह दृष्टि ही मिथ्यात्वरूप भ्रम है। 'पर को सुखी कर सकूँ, पर को लाभ करा दूँ' – यह कर्त्ताबुद्धि का अभिमान है; अनासक्ति नहीं।

प्रश्न : पदार्थों की स्वतंत्रता समझने से क्या लाभ है ?

उत्तर : पदार्थों की स्वतंत्रता समझने से अपने परिणाम का कर्त्ता स्वयं है – अन्य नहीं है, इसप्रकार समझने से पर से विमुख होकर अपने में परिणाम लगाकर आत्मा का अनुभव करना ही लाभ है। अपने ज्ञाता-दृष्टा स्वभाव को जानकर मात्र देखनेवाला-जाननेवाला बना रहे, तो चौरासी के अवतार में भटकना मिटे और मुक्ति प्राप्त हो – यह लाभ है।

प्रश्न : क्रमनियत शब्द का शब्दार्थ तथा भावार्थ बतलाइए ?

उत्तर : क्रमनियत शब्द में क्रम अर्थात् क्रमसर तथा नियत अर्थात् निश्चित्। जिस समय जो पर्याय आनेवाली है, वही आयेगी; उसमें फेरफार नहीं हो सकता। तीन काल में जिस समय जो पर्याय होनेवाली है, वही होगी। जगत का कर्त्ता ईश्वर नहीं अथवा परद्रव्य का आत्मा कर्त्ता नहीं; परन्तु राग का भी कर्त्ता आत्मा नहीं है। अरे ! यहाँ तो कहते हैं कि पलटती हुई पर्याय का भी कर्त्ता आत्मा नहीं। षट्कारक से स्वतंत्रपने कर्त्ता होकर पर्याय स्वयं पलटती है, वह सत् है और उसे किसी की भी अपेक्षा नहीं है।

समाचार दर्शन -

श्री टोडरमल स्मारक भवन के त्रिदिवसीय महोत्सव में –

डॉ. भारिल्ल ने बताया प्रवचनसार का संपूर्ण मर्म

जयपुर (राज.) : यहाँ श्री टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 26 से 28 फरवरी 2017 तक पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का पंचम वार्षिकोत्सव अनेक मांगलिक आयोजनों सहित सानन्द सम्पन्न हुआ।

महोत्सव में **डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल** द्वारा प्रवचनसार पर प्रतिदिन दोनों समय मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला, जिसमें उन्होंने संपूर्ण प्रवचनसार परमागम का मर्म बताया। महोत्सव में गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचन के अतिरिक्त विधान एवं प्रवचनों के माध्यम से पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर एवं डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर ने भी प्रवचनसार का सार बताया।

इस अवसर पर महोत्सव के विशेष आकर्षण के रूप में प्रतिदिन प्रात: डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल द्वारा रचित प्रवचनसार महामंडल विधान का प्रथम बार आयोजन किया गया। प्रवचनसार विधान के संपूर्ण कार्य डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर के निर्देशन में पण्डित विवेकजी शास्त्री इन्दौर, पण्डित रूपेन्द्रजी शास्त्री एवं टोडरमल महाविद्यालय के छात्रों द्वारा संपन्न कराये गये।

सांस्कृतिक कार्यक्रमों के अन्तर्गत दिनांक 26 फरवरी को महाविद्यालय के छात्रों द्वारा 'टोडरमल से टोडरमल स्मारक तक' नामक नाट्य प्रस्तुति की गई। दिनांक 27 फरवरी को श्रीमती ज्योति टोंग्या जयपुर द्वारा आध्यात्मिक भजन संध्या का आयोजन हुआ।

दिनांक 28 फरवरी को सीमंधर जिनालय एवं पंचतीर्थ जिनालय में विराजमान सभी जिनबिम्बों के महामस्तकाभिषेक का मंगलमयी आयोजन किया गया। इसके अन्तर्गत श्री अशोकजी जैन 'अरिहंत केपिटल' इन्दौर द्वारा भगवान महावीर का, डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल द्वारा भगवान आदिनाथ, श्री सुशीलकुमारजी गोदिका जयपुर द्वारा श्री शान्तिनाथ भगवान, श्री महेन्द्रकुमार राहुलजी गंगवाल जयपुर द्वारा श्री बाहुबली भगवान एवं श्री महेन्द्रकुमार-संजीवकुमार गोधा जयपुर द्वारा श्री पार्श्वनाथ भगवान का सर्वप्रथम अभिषेक किया गया।

श्री निर्मलजी संघी जयपुर द्वारा पद्मासन सीमंधर भगवान, श्री विक्रमजी शाह द्वारा युगमन्धर भगवान, श्री संजयजी कोठारी मुम्बई द्वारा बाहु भगवान एवं श्री प्रकाशचंदजी छाबड़ा सूरत द्वारा सुबाहु भगवान का अभिषेक किया गया। चतुर्मुखी नेमिनाथ भगवान का अभिषेक श्री राजकुमारजी टोंग्या जयपुर एवं चतुर्मुखी वासुपूज्य भगवान का अभिषेक श्री महेन्द्रकुमार सुरेन्द्रकुमारजी पाटनी जयपुर ने किया।

इसप्रकार यह महोत्सव अत्यंत हर्षोल्लास के साथ संपन्न हुआ। ●

राजस्थान जैन सभा एवं महावीरजी के नवनिर्वाचित पदाधिकारियों का –

सम्मान समारोह संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में पंचम वार्षिक महोत्सव के अवसर पर दिनांक 26 फरवरी को रात्रि में राजस्थान जैन सभा एवं श्री महावीरजी की नवनिर्वाचित कार्यकारिणी का सम्मान समारोह संपन्न हुआ।

समारोह की अध्यक्षता श्री अशोककुमारजी बड़जात्या इन्दौर ने की। मुख्य अतिथि के रूप में श्री महेन्द्रकुमारजी पाटनी जयपुर एवं श्री राजेन्द्र के. गोधा जयपुर उपस्थित थे।

इस अवसर पर राजस्थान जैन सभा के श्री मुकेश सौगानी (उपाध्यक्ष), श्री राजेन्द्र जैन लुहाड़िया (कोषाध्यक्ष), श्री अमरचन्द जैन दीवान खोराबीसल (संयुक्त मंत्री) आदि महानुभावों को श्री सुशीलकुमारजी गोदिका ने शॉल ओढाकर एवं डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल ने प्रशस्ति-पत्र भेंटकर सम्मानित किया।

श्री महावीरजी कमेटी के पदाधिकारियों के अन्तर्गत श्री सुधांशु कासलीवाल (अध्यक्ष), श्री नरेन्द्र पाटनी (उपाध्यक्ष), श्री महेन्द्रकुमार पाटनी (मंत्री), श्री उमरावमल संघी (संयुक्त मंत्री), आदि महानुभावों को श्री सुशीलकुमारजी गोदिका ने शॉल ओढाकर एवं डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल ने प्रशस्ति-पत्र भेंटकर सम्मानित किया। इस अवसर पर विद्वत्वर्ग के अन्तर्गत तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल, पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील, डॉ. संजीवजी गोधा, पण्डित विवेकजी शास्त्री इन्दौर आदि उपस्थित थे।

सभी अतिथियों का स्वागत श्री अध्यात्मप्रकाशजी भारिल्ल द्वारा तिलक लगाकर एवं श्री शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल द्वारा अंगवस्त्र पहनाकर किया गया तथा कार्यक्रम का संचालन श्री परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल ने किया। ●

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के –

नवनिर्मित कार्यालय व कक्षा कक्षों का उद्घाटन संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में पंचतीर्थ जिनालय के वार्षिकोत्सव के अवसर पर टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के नवनिर्मित कार्यालय एवं विभिन्न कक्षा कक्षों का उद्घाटन संपन्न हुआ।

इस अवसर पर दिनांक 27 फरवरी को आचार्य कुन्दकुन्द कक्षा कक्ष का उद्घाटन श्री महेन्द्रकुमार राहुलजी गंगवाल जयपुर ने एवं आचार्य अमृतचन्द्र कक्षा कक्ष का उद्घाटन श्री प्रेमचंदजी तन्मय-ध्याता बजाज कोटा ने किया। दिनांक 28 फरवरी को नवनिर्मित कार्यालय का उद्घाटन श्री अशोकजी जैन 'अरिहंत कैपिटल', इन्दौर द्वारा किया गया। ●

आचार्य धरसेन दि.जैन सिद्धांत महाविद्यालय कोटा में –

प्रवेश हेतु अपूर्व अवसर

कोटा (राज.) : आचार्य धरसेन दि.जैन सि.महाविद्यालय के 8वें सत्र का शुभारंभ 25 जून से हो रहा है। महाविद्यालय में 10वीं कक्षा में उत्तीर्ण छात्रों को प्रवेश दिया जाता है। छात्रों को जैनधर्म के सिद्धांतों के अध्ययन के साथ माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान की वरिष्ठ उपाध्याय (12वीं) एवं राज. संस्कृत विश्वविद्यालय की शास्त्री (बी.ए.समकक्ष) डिग्री पाठ्यक्रम पढ़ाया जाता है। छात्रों के लौकिक विकास हेतु अंग्रेजी, विज्ञान एवं कम्प्यूटर की शिक्षा भी प्रदान की जाती है।

यहाँ छात्रों के आवास, भोजन एवं शिक्षा की संपूर्ण व्यवस्था नि:शुल्क रहती है। प्रवेश-प्रक्रिया 21 मई से 7 जून 2017 तक खनियांधाना में लगने वाले प्रशिक्षण शिविर के दौरान संपन्न होगी। जो भी छात्र प्रवेश इच्छुक हों वे निम्न पते से पत्र या फोन द्वारा प्रवेश फार्म मंगा सकते हैं। **संपर्क –** पण्डित धर्मेन्द्र शास्त्री (प्राचार्य), मो. 9785643203; पण्डित रतनचंद चौधरी (निदेशक), मो. 9828063891, 8104597337; **फार्म मंगाने का पता –** बजाज पैलेस, नगर परिषद कॉलोनी, छावनी, कोटा (राज.)

वार्षिकोत्सव सानन्द संपन्न

नागपुर (महा.) : यहाँ श्री कुन्दकुन्द दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंडल ट्रस्ट नागपुर द्वारा संचालित श्री महावीर विद्या निकेतन का नवम् वार्षिकोत्सव दिनांक 15 से 19 फरवरी तक मनाया गया।

इस अवसर पर **डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर** द्वारा प्रात: पंचपरावर्तन एवं रात्रि में तीन लोक विषय पर व्याख्यानों का लाभ मिला।

कार्यक्रम का शुभारंभ पण्डित नितिनजी शास्त्री झालरापाटन द्वारा स्वागत गीत से हुआ तथा मंगलाचरण कक्षा 8 के छात्रों द्वारा किया गया।

इस अवसर पर कक्षा 10 के छात्रों ने अपने खट्टे-मीठे अनुभव सुनाये तथा प्रमुख अतिथियों ने भी अपने-अपने वक्तव्य से जनसमूह का मार्गदर्शन किया। तत्पश्चात् श्री महावीर विद्या निकेतन के टॉप 10, टॉप 5, टॉप 3 विद्यार्थियों के नामों की घोषणा के साथ आदर्श विद्यार्थी के रूप में संस्कार राजकुमार जैन घुवारा का चयन किया गया तथा पुरस्कृत किया गया।

कार्यक्रम में कक्षा 9 के छात्रों द्वारा विद्या निकेतन की दिनचर्या को नाटिका के माध्यम से प्रस्तुत किया गया।

कार्यक्रम का संचालन उपप्राचार्य पण्डित मनीषजी शास्त्री एवं अधीक्षक पण्डित भूषणजी शास्त्री ने किया। ●

विदाई समारोह संपन्न

जयपुर (राज.) : ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 3 मार्च को श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय के शास्त्री तृतीय वर्ष के छात्रों का विदाई समारोह संपन्न हुआ। इस प्रसंग पर प्रात: पंचतीर्थ जिनालय पर जिनेन्द्र पूजन और रात्रि में भव्य जिनेन्द्र भक्ति का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर शास्त्री द्वितीय वर्ष के विद्यार्थियों द्वारा आयोजित चार सत्रों के विदाई समारोह की अध्यक्षता तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल ने की। विशिष्ट अतिथि के रूप में ब्र.यशपालजी जैन, श्री शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील, डॉ.संजीवकुमारजी गोधा, डॉ. दीपकजी जैन 'वैद्य', पण्डित पीयूषजी शास्त्री, पण्डित प्रमोदजी शास्त्री, पण्डित अनिलजी शास्त्री, पण्डित अच्युतकांतजी शास्त्री, पण्डित गौरवजी शास्त्री, श्रीमती कमला भारिल्ल एवं श्रीमती गुणमाला भारिल्ल, कु.प्रतीति जैन इत्यादि महानुभाव मंचासीन थे।

कार्यक्रम में शास्त्री तृतीय वर्ष के सभी विद्यार्थियों ने अपने अनुभव सुनाते हुए महाविद्यालय को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में विद्या अध्ययन का सर्वश्रेष्ठ केन्द्र बताया तथा महाविद्यालय में अपना स्वर्ण युग व्यतीत हुआ बताते हुये स्वयं को सौभाग्यशाली बताया। साथ ही सभी विद्यार्थियों ने जीवनपर्यंत स्वाध्याय एवं तत्त्वप्रचार का संकल्प भी लिया। डॉ.भारिल्ल ने सभी को धर्मध्वज दिया एवं पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील ने आजीवन तत्त्वप्रचार का संकल्प करवाया।

तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल ने कहा कि सभी ने हृदय से अपनी भावनाएं व्यक्त करते हुए तत्त्वज्ञानपूर्वक जीवन जीने की कला सिखाने के लिये महाविद्यालय एवं गुरुओं के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित की है, यह हमारे अध्यापकों के गुरुत्व का ही कमाल है। उन्होंने महाविद्यालय के दो मुख्य उद्देश्य आत्मानुभूति एवं तत्त्वप्रचार पर विशेष बल देकर छात्रों को उद्बोधन दिया।

ब्र.यशपालजी ने कहा कि भविष्य में आप संस्था से जुड़कर कार्य करेंगे तो आपको अधिक सफलता मिलेगी। श्री शुद्धात्मप्रकाशजी ने कहा कि योग्यता आपने यहाँ से हासिल की है, यह आपको सफल तो बनायेगी; लेकिन चरित्र आपको सफल बनाये रखना है, अत: चरित्र पर भी ध्यान देवें। पण्डित शांतिकुमारजी ने कहा कि अभी तक आपने बहुत सी बातें सुनायी और सुनी। अब इन सुनी-सुनायी बातों पर अमल करेंगे तो लौकिक व लोकोत्तर दोनों जीवन निश्चित ही सुखमय होगा। डॉ. संजीवकुमारजी गोधा ने नियमित स्वाध्याय पर बल देते हुए कहा कि आप सभी ने आज अपने आत्मकल्याण एवं तत्त्वप्रचार करने के लिये जो भावनाएं व्यक्त की हैं, उन्हें सदैव याद रखना।

अंत में शास्त्री तृतीय वर्ष के सभी छात्रों को फोटो, श्रीफल और डॉ. भारिल्ल व पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल के अभिनन्दन-ग्रन्थ भेंटकर सम्मानित किया गया। ज्ञातव्य है कि शास्त्री द्वितीय वर्ष के छात्रों ने अथक परिश्रमपूर्वक पूरे हॉल को राजस्थानी ग्रामीण परिवेश में सजाया था और स्वयं भी राजस्थानी वेशभूषा में थे। ●

वेदी शिलान्यास संपन्न

उदयपुर (राज.) : यहाँ संस्कार तीर्थ शाश्वतधाम में निर्माणाधीन सीमंधर जिनालय के द्वितीय तल पर श्री नेमीनाथ भगवान की वेदी का एवं उत्तुंग शिखर का शिलान्यास दिनांक 26 फरवरी को संपन्न हुआ।

इस अवसर पर वेदी शिलान्यास श्री महेन्द्रजी गंगवाल परिवार जयपुर एवं शिखर शिलान्यास श्री प्रदीपजी चौधरी परिवार किशनगढ द्वारा किया गया। विधि-विधान के समस्त कार्य ब्र. जतीशचंदजी शास्त्री दिल्ली के निर्देशन में पण्डित रजनीभाई दोशी द्वारा संपन्न हुये।

कार्यक्रम में दिनांक 2 से 7 दिसम्बर 2017 तक होने वाले शाश्वतधाम पंचकल्याणक के अध्यक्ष श्री अजितजी जैन द्वारा इस महोत्सव का आमंत्रण दिया गया। ●

शिक्षण शिविर संपन्न

पोन्नूरमलै (तमिलनाडु) : यहाँ प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी दिनांक 21 से 26 फरवरी तक आध्यात्मिक शिक्षण शिविर एवं पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली द्वारा रचित सार समयसार मंडल विधान एवं सार प्रवचन मंडल विधान का आयोजन हुआ।

इस अवसर पर प्रतिदिन तीनों समय की व्याख्यानमाला के क्रम में पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री द्वारा उभयाभासी मिथ्यादृष्टि विषय पर एवं डॉ. सुदीपजी जैन द्वारा आचार्य कुन्दकुन्द के जीवन के विशिष्ट पहलुओं, उनके साहित्यिक अवदान और अन्य ऐतिहासिक तथ्यों की प्रामाणिक चर्चा प्रस्तुत की गई। आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के सी.डी. प्रवचन के पश्चात् डॉ. राकेशजी शास्त्री द्वारा गुरुदेवश्री के प्रवचन पर विशेष चर्चा हुई। प्रात:कालीन व्याख्यानमाला में पण्डित विरागजी शास्त्री, पण्डित गुलाबचंदजी बीना, पण्डित जयकुमारजी कोटा, पण्डित प्रमोदजी सागर आदि के व्याख्यान हुये।

शिविर में लगभग 200 साधर्मियों ने पधारकर लाभ लिया। संपूर्ण कार्यक्रम श्री अनन्तराय ए.शेठ के मार्गदर्शन और विरागजी शास्त्री के संयोजन में संपन्न हुये। **– राजीव जैन, प्रबंधक**

हार्दिक बधाई

पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल के सुपौत्र एवं श्री शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल के सुपुत्र **चि. सर्वज्ञ भारिल्ल** का मंगल विवाह कोलकाता निवासी स्व. श्री बालचंदजी पाटनी की सुपौत्री एवं श्री सुरेशजी पाटनी की सुपुत्री **सौ.कां. चैरी** के साथ दिनांक 21 फरवरी को अत्यन्त उत्साह के साथ संपन्न हुआ। इस अवसर पर दोनों परिवारों की ओर से 51000-51000/- रुपये निकाले गये। इस उपलक्ष्य में जैनपथप्रदर्शक परिवार की ओर से नवदम्पत्ति को हार्दिक बधाई।

अष्टाह्निका महापर्व सानन्द संपन्न

(1) जयपुर (राज.) : यहाँ जनता कॉलोनी में पर्व के अवसर पर दिगम्बर जैन मंदिर में दिनांक 5 से 12 मार्च तक कल्पद्रुम महामंडल विधान का भव्य आयोजन किया गया, जिसमें सैंकड़ों साधर्मी बन्धुओं ने धर्मलाभ लिया। विधान के समस्त कार्य डॉ. संजीवकुमारजी गोधा के निर्देशन में पण्डित विवेकजी शास्त्री इन्दौर द्वारा पण्डित विजयजी एवं पण्डित विकेशजी के सहयोग से संपन्न हुये। कार्यक्रम के मुख्य समन्वयक श्री गौरवजी जैन, जनता कॉलोनी थे।

इस अवसर पर बनी हुई समवशरण की रचना में कमलासन पर विराजमान चार प्रतिमाएं आकर्षण का केन्द्र रहीं। ज्ञातव्य है कि ये प्रतिमाएं मुल्तान-पाकिस्तान से देश विभाजन के समय आई हैं, जो वर्तमान में आदर्श नगर स्थित दिगम्बर जैन मंदिर में विराजमान है।

इस प्रसंग पर प्रतिदिन सायंकाल जिनेन्द्र भक्ति एवं डॉ. संजीवजी गोधा के प्रवचनों का लाभ मिला। ज्ञातव्य है कि दो दिन श्री हर्षवर्धनजी जैन द्वारा विशेष सेमिनार का आयोजन किया गया, जिसकी उपस्थित जनसमुदाय ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की।

आयोजन में जनता कॉलोनी जैनसभा, अ.भा. जैन युवा महिला फैडरेशन एवं स्वाध्याय मंडल के सक्रिय सहयोग सहित पण्डित राजेशजी शास्त्री शाहगढ एवं श्री परितोषजी जैन का अपूर्व सहयोग रहा। **– सुधीर गंगवाल, अध्यक्ष-जैनसभा, जनता कॉलोनी**

(2) मुम्बई : यहाँ अष्टाह्निका के अवसर पर विभिन्न उपनगरों में विद्वानों द्वारा व्याख्यानों का लाभ मिला, जिनमें **सीमंधर जिनालय** में पण्डित रितेशजी जैन डडूका, **मलाड (ईस्ट)** में पण्डित मनीषजी जैन इन्दौर, **बोरीवली** में पण्डित अश्विनभाई शाह मलाड, **घाटकोपर** में पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा, **वसई** में पण्डित अनिलभाई शाह दहिसर, **मलाड (वेस्ट)** में पण्डित विपिनजी जैन, **दहीसर** में पण्डित ज्ञायकजी जैन वसई, **भायंदर** में पण्डित देवेन्द्रजी जैन मंगलायतन, **दादर** में पण्डित राजेश शेठ व पण्डित जिनेश शेठ का लाभ मिला।

(3) गढाकोटा (म.प्र.) : यहाँ अष्टाह्निका महापर्व के अवसर पर डॉ. दीपकजी जैन 'वैद्य' जयपुर द्वारा तीनों समय नाटक समयसार पर प्रवचनों का लाभ मिला।

(4) भीलवाड़ा (राज.) : यहाँ पर्व के अवसर पर सीमंधर जिनालय में श्री प्रवचनसार मंडल विधान संपन्न हुआ। इस अवसर पर गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचनों के अतिरिक्त मंगलार्थी श्री सुलभ जैन झांसी, श्री शुद्धात्मप्रकाश चौधरी एवं श्री अनितेश जैन करेली द्वारा प्रवचन हुये। विधि-विधान के समस्त कार्य डॉ. अरविन्दकुमारजी जैन जयपुर द्वारा संपन्न हुये। कार्यक्रम का संयोजन श्री महावीरजी चौधरी एवं श्री नेमीचंदजी बघेरवाल ने किया। **– सुलभ जैन, मंगलार्थी**

(5) अजमेर (राज.) : यहाँ पर्व के अवसर पर वीतराग-विज्ञान स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट के अन्तर्गत निर्मित श्री ऋषभायतन अध्यात्मधाम मंदिर में प्रथम बार श्री नियमसार महामंडल विधान संपन्न हुआ। इस अवसर पर ब्र. श्रेणिकजी जबलपुर द्वारा प्रात:काल नियमसार ग्रन्थ की 187 गाथाओं पर विस्तृत विवेचन एवं सायंकाल पुरानी मण्डी स्थित श्री सीमंधर जिनालय में मोक्षमार्गप्रकाशक पर प्रवचनों का लाभ मिला। विधान के कार्य ब्र.श्रेणिकजी द्वारा पण्डित अनेकान्तजी शास्त्री जयपुर के सहयोग से किये गये। **– प्रकाश पाण्ड्या, अजमेर**

शिखरजी में हुये स्वर्ण जयंती शिविर में सहयोग करने वाले महाविद्यालय के विद्यार्थियों का-

सम्मान समारोह संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ श्री टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 20 मार्च को टोडरमल महाविद्यालय के विद्यार्थियों का सम्मान किया गया, जिन्होंने शिखरजी में हुये स्वर्ण जयन्ती शिविर में सहयोग प्रदान किया था।

समारोह के अन्तर्गत तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल, पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल, श्री योगेन्द्र दुर्लभजी (सैक्रेटरी-संतोकबा दुर्लभजी मेमोरियल हॉस्पिटल), श्री परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल, श्री शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील आदि महानुभाव मंचासीन थे।

कार्यक्रम का मंगलाचरण श्री रेमांशु जैन ने एवं स्वागत भाषण श्री परमात्मप्रकाशजी ने किया। श्री योगेन्द्रजी का परिचय श्री सर्वज्ञ भारिल्ल ने दिया।

इस अवसर पर डॉ. भारिल्ल, श्री शुद्धात्मप्रकाशजी एवं श्री योगेन्द्रजी के उद्बोधन का लाभ उपस्थित जनसमुदाय को मिला।

प्रशिक्षण शिविर का आमंत्रण दिया

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में चल रहे पंचम वार्षिकोत्सव के अवसर पर खनियांधाना मुमुक्षु मण्डल के सदस्यों द्वारा दिनांक 21 मई से 7 जून तक खनियांधाना में होने वाले 51वें वीतराग-विज्ञान शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर का आमंत्रण दिया गया।

इस अवसर पर तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल व अन्य विद्वानों के अतिरिक्त श्री महेन्द्रकुमार राहुलकुमारजी गंगवाल जयपुर, श्री प्रेमचंदजी बजाज कोटा, पण्डित शिखरचंदजी विदिशा, श्री कांतिभाई मोटानी मुम्बई, श्री नितिनभाई शाह मुम्बई आदि श्रेष्ठीजन मंचासीन थे।

डॉ. भारिल्ल ने अपने उद्बोधन में सभी साधर्मियों से प्रशिक्षण शिविर में पधारने एवं सहयोग करने की भावना व्यक्त की। प्रशिक्षण शिविर की संपूर्ण जानकारी श्री सुनील जैन 'सरल' द्वारा दी गई।

वैराग्य समाचार

कोलकाता निवासी श्री विनयकुमारजी पाण्ड्या का दिनांक 28 जनवरी को 58 वर्ष की आयु में आकस्मिक निधन हो गया। आप सरल स्वभावी आत्मार्थी मुमुक्षु थे। आपकी स्मृति में वीतराग-विज्ञान एवं जैनपथप्रदर्शक हेतु 1100/- रुपये प्राप्त हुये।

दिवंगत आत्मा चतुर्गति के दु:खों से छूटकर शीघ्र ही अनंत अतीन्द्रिय आनंद को प्राप्त हो - यही मंगल भावना है।

डॉ. भारिल्ल का विदेश कार्यक्रम

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष 2017 में भी धर्मप्रचारार्थ विदेश जा रहे हैं। यह उनकी 35वीं विदेश यात्रा है। जिन भारतवासी बन्धुओं के परिवार या सम्बन्धी निम्न स्थानों पर रहते हों, वे उन्हें सूचित कर दें। उनकी सुविधा हेतु वहाँ के फोन, फैक्स एवं ई.मेल दिये जा रहे हैं, जहाँ डॉ. भारिल्ल ठहरेंगे। डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा एवं पण्डित विपिनजी शास्त्री के कार्यक्रमों का आयोजन **(JAANA)** द्वारा किया जा रहा है। डॉ. भारिल्ल का नगरवार कार्यक्रम निम्नानुसार है –

क्र.	शहर	सम्पर्क-सूत्र	दिनांक
1.	टोरंटो	**Gyanchand Jain G..C. Jain Investments Limited 276, Carlaw Ave. SUITE # 200 TORONTO, ONTARIO, CANADA, M4M-3LI Ph. 001-4164691109 E-mail : gyanjain@studioloft.com**	**9 से 15 जून**
2.	शिकागो	**Bipin Bhayani (O) 815-939-3190 (R) 815-939-0056 Tanmay Bhai +1-847-903-9511**	**16 से 23 जून**
3.	डलास	**Atul Khara R : 972-8676535 O : 972-424-4902 C : 469-831-2163 Email - insty@verizon.net**	**24 से 30 जून**
4.	एडीसन (न्यूजर्सी)	**Dr. Hemant Bhai Shah Email-hemantshahmd@aol.com (M) 201-759-3202 Rajendra Jain - Email - rajqmar@yahoo.com**	**1 से 3 जुलाई (जैना कन्वेन्शन)**
5.	(न्यूजर्सी)	**Atul Khara R : 972-8676535 O : 972-424-4902 C : 469-831-2163 Email - insty@verizon.net Himanshu Bhai +1-732-429-0055**	**4 से 9 जुलाई (जाना शिविर)**
6.	मुम्बई	**श्री अध्यात्मप्रकाश भारिल्ल Mob. 09821016988**	**12 जुलाई**

डॉ. भारिल्ल की तरह ही उनके शिष्य **डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर** एवं **पण्डित विपिनजी शास्त्री नागपुर** भी विगत वर्षों की भांति इस वर्ष भी 'जैन अध्यात्म अकेडमी ऑफ नॉर्थ अमेरिका' **(JAANA)** के आमंत्रण पर धर्मप्रचारार्थ अमेरिका जा रहे हैं। डॉ. संजीवजी गोधा का कार्यक्रम 25 मई से 10 जुलाई तक तथा पण्डित विपिनजी शास्त्री का कार्यक्रम 9 जून से 13 जुलाई तक है। इनके नगरवार कार्यक्रम आगामी अंक में प्रकाशित किये जायेंगे।

श्री समयसार विधान एवं सप्तम आध्यात्मिक शिक्षण शिविर सानन्द संपन्न

इन्दौर (म.प्र.) : यहाँ श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन शासन प्रभावना ट्रस्ट (ढाईद्वीप जिनायतन) एवं श्री पंच लश्करी गोठ ट्रस्ट रामाशाह जी मंदिर मल्हारगंज के संयुक्त तत्त्वावधान में डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल द्वारा रचित श्री समयसार विधान एवं सप्तम आध्यात्मिक शिक्षण शिविर दिनांक 5 से 12 मार्च तक संपन्न हुआ।

इस अवसर पर देश-विदेश में ख्यातिप्राप्त विद्वान डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल द्वारा श्री समयसार विधान पर मार्मिक एवं भावपूर्ण प्रवचनों का लाभ मिला। दोपहर में स्थानीय विद्वानों, पण्डित अध्यात्मप्रकाशजी भारिल्ल एवं विदुषी शुद्धात्मप्रभाजी द्वारा प्रवचन तथा रात्रि में पण्डित अनिलजी धवल भोपाल व स्थानीय विद्वानों द्वारा प्रवचनों का लाभ मिला। शिविर में लगभग 2500 साधर्मियों ने लाभ लिया।

डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल प्रवचन करते हुए

विधान करते हुए साधर्मीजन

R.N.I. No. 38278/83 *Postal Regd. No. JaipurCity/421/2015-17*

S.P. भारिल्ल द्वारा विशेष व्याख्यान

इन्दौर (म.प्र.) : यहाँ रामाशाह मंदिर में आयोजित आध्यात्मिक शिक्षण शिविर एवं श्री समयसार महामंडल विधान के अवसर पर दिनांक 11 मार्च को श्री शुद्धात्मप्रकाश भारिल्ल जयपुर द्वारा 'प्रकृति का नियम - कण-कण की स्वतंत्रता' विषय पर 2500 साधर्मियों की उपस्थिति में आकर्षक व्याख्यान हुआ, जिसमें जैन सिद्धांतों के आधार से समस्त विश्व को जीव और अजीव - इन दो भागों में विभाजित किया। उन्होंने बताया कि किसी भी व्यक्ति का शरीर अजीव है और आत्मा जीव है। मृत्यु होने पर आत्मा निकल जाती है और निर्जीव शरीर यहीं पड़ा रह जाता है, इसी से सिद्ध होता है कि शरीर और आत्मा भिन्न-भिन्न हैं। कोई भी जीव किसी के आधीन नहीं; अपितु पूर्णतया स्वतंत्र है।

कार्यक्रम में विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री विष्णु प्रसादजी शुक्ला, श्री प्रदीपजी कासलीवाल, श्री टी.के. बैद शाह, श्री डी.के. जैन साव, श्री अनिल जैन 'जैनको' आदि महानुभाव उपस्थित थे। कार्यक्रम में ढाईद्वीप जिनायतन का संपूर्ण परिचय भी दिया गया।

श्री शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल सेमिनार लेते हुए

सम्पादक :
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल
शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., पीएच. डी.
सह-सम्पादक :
डॉ. संजीवकुमार गोधा
एम.ए.द्वय , नेट, एम. फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी.
प्रकाशक एवं मुद्रक :
ब्र. यशपाल जैन, एम. ए.
द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये
जयपुर प्रिंटर्स प्रा.लि., जयपुर से
मुद्रित एवं प्रकाशित।

If undelivered please return to -- **Pandit Todarmal Smarak Trust , A-4, Bapu Nagar, Jaipur - 302015**